नवभारत 06
इंदौर, रविवार, 22 मार्च, 2026

कहानी

ये मोह-मोह के धागे

गीता शर्मा

दिन भर की भागदौड़ से त्रस्त होकर मैं जब रेलवे स्टेशन पहुंचा तो पता चला कि गाड़ी लगभग दो घंटे लेट है. उफ्फ! अभी भी हालात वैसे ही है

भारतीय रेल भारतीय समय पर ही आयेगी न... एक तो पहले ही मुझे ट्रेन से यात्रा करना उबाऊ लगता है और दूसरे अगर लेट हो जाए तो मेरा पारा चढ़ जाता है.

'गाड़ी के देरी से आने का हमें खेद है...' की पुनरावृत्तिक घोषणा सुन-सुन कर मेरी खीझ बढ़ती जा रही थी. मैं अन्मयस्क सा प्लेटफॉर्म पर चहलकदमी करने लगा.

तभी फोन की घंटी बजी दूसरी ओर नम्रता थी.

'कहां तक पहुंच गए?'

'कहीं नहीं यहीं फंसा हुआ हूं...'

'क्या हुआ इतना क्यों चिढ़ रहे हो?'

'ट्रेन लेट है...'

'कोहरे के कारण हो जाता है ये सब...'

'ज्ञान मत दो मुझे...अभी फोन रखो...' मैंने तल्खी से फोन काटते हुए कहा, 'ट्रेन में बैठकर बात करता हूं.'

'अरे बैठ जाइए... आपके इस तरह चक्कर लगाने से ट्रेन जल्दी थोड़े ही आ जाएगी.'

'एक्सक्यूज मी...' मैंने उसकी आंखों से छलकती शरारत को देखकर कहा. 'आप थोड़ी देर बैठ जाइए शांति से... गहरी लंबी सांस लीजिए...

आपका गुस्सा कुछ कम होगा...'

'नहीं, मैं ऐसे ही ठीक हूं, जब तक ट्रेन नहीं आ जाती मेरी बेचैनी बनी रहेगी, और फिर बैठकर ही तो जाना है, 'मैं बात को समाप्त करने के उद्देश्य से कहा.

'तो ठीक है फिर घूमते रहिए ऐसे ही... यहां से वहां ...वहां से यहां...' मेरा फोन फिर बज उठा. मैं वहां से दूर चला आया. इस बार फोन पर मेरी सहकर्मी थी.ऑफिस की राजनीति और सरकारी तंत्र को कोसते हुए शुरू हुआ संवाद प्रेम के इसरार इनकार तक जा पहुंचा.

मैंने देखा कि वो भी अपने मोबाइल में व्यस्त हैं .कभी फोन पर बात करती और कभी कोई गाना सुनती. बालों में सफेदी और चेहरे पर छाई झुर्रियों के बीच उसकी मृदुस्मित कुछ पहचानी हुई सी लग रही थी .एक खुशनुमा मौसम सा आकर्षक व्यक्तित्व. शायद मुझे घूरते हुए देखकर वह कुछ असहज हो गई. 'क्या आप घूमते-घूमते मेरे लिए पानी की एक बॉटल ला देंगे?' 'हां हां क्यों नहीं ?' उसका अनौपचारिक आग्रह मैं टाल नहीं सका. पानी की बॉटल देकर अंतत: मैं भी उसी बेंच पर बैठ गया.

'आप यहीं की रहने वाली हैं क्या?'

'स्त्रियों के स्थायी निवास कहां होते हैं जी? जन्म कहीं होता है और जिंदगी कहीं और ब्याह देती है...'

'ओह! मेरा उद्देश्य आपको दु:ख पहुंचाना नहीं था.'

'अरे नहीं... दुखों के ढेर को काहे का दु:ख... अब कोई दु:ख नया नहीं लगता...एक दूसरे के रिश्तेदार ही लगते हैं मुझे तो...वैसे भी दु:ख तो दोस्त होते हैं औरतों के,' कहते हुए वह जोर से खिलखिलाकर हंसने लगी.

मैंने देखा कि उसकी आंखों की कोरों पर बूंदें आकर टिक गईं.

'आप भी इसी ट्रेन से जा रही हैं सिग्नल हो गए हैं गाड़ी आने वाली है,आपका कोच कौन सा है?' मैंने विषय परिवर्तन करते हुए पूछा.

ट्रेन आई और हम जाकर अपनी-अपनी सीट पर जाकर बैठ गए. स्मृति कूप में डूबा हुआ मेरा मन अभी तक इस सहयात्री के चेहरे में अतीत में छिपी पहचान खोज रहा था. उम्र का पर्दा या मेरी कमजोर होती याददाश्त ने रहस्य को रहस्य बनाए रखा.

थोड़ी देर बाद न जाने क्यों मैं उठकर उनकी सीट तक चला आया. 'आप ठीक तो हैं?' 'हम्मम...' 'वैसे कहां जा रही हैं?'

'मुंबई...'

'क्यों?' मैंने अनायास पूछ लिया

'हम्मम... वेलेंटाइन डे आ रहा है न तो पति के पास जा रही हूं वे मुंबई में रहते हैं.'

'वेलेंटाइन डे... आप भी... वो भी इस उम्र में ...'

'क्यों? हम नहीं मना सकते हैं क्या? हमारे जमाने में तो ये सब चोचले नहीं थे, पर अब मनाने में क्या बुराई है?'

'नहीं बुराई तो नहीं है पर क्या जरूरत है ऐसे प्रेम प्रदर्शन की...? मेरी समझ के परे है ये बातें ...' 'क्यों ? इसमें समझ में न आने वाली कौन सी बात है? और फिर अपनी बड़ी बड़ी आंखों में अचरज का काजल लगाकर पूछा, 'आपने कभी नहीं मनाया?'

'नहीं...'

'कभी भी...' 'हां... कभी नहीं...आप इतना आश्चर्य क्यों कर रही हैं?' 'मना कर देखिए... आपकी वेलेंटाइन को बहुत अच्छा लगेगा...प्रेम तो करते हैं न आप अपनी वेलेंटाइन से...'

इस प्रश्न से मैं एकदम से अचकचा गया. मुझे कुछ नहीं सूझा तो मैंने कहा, 'प्रेम विवाह किया है मैंने ...'

'और अब प्रेम है या विवाह?'

'मतलब ?' 'प्रेम तो हमने भी किया पर विवाह के बाद... क्या करें...हम स्त्रियों को विवाह के बाद प्रेम हो ही जाता,' वो अपने होठों को किंचित तिरछा करके मुस्कराई.

गहरी उच्छवास छोड़ते हुए बोली, 'कुछ सालों के बाद प्रेम गायब हो गया और सिर्फ विवाह बचा और फिर धीरे-धीरे विवाह भी अदृश्य हो गया.' वो धीरे से बुदबुदायी मानों स्वयं से बात कर रही हो. उसके चेहरे ने धीर गम्भीरता ओढ़ ली जिसे परे धकेलकर उसने एक और प्रश्न दागा, 'और आपके प्रेम का क्या हाल है जी? अभी है या फिर वो भी विवाह की वेदी पर चढ़ गया?'

'प्रेम है न... बिल्कुल है, है न,' मानों उसे नहीं खुद को यक़ीन दिला रहा हूं.'

ये तो अच्छी बात है...जब तक विवाह में प्रेम बचा रहता है तभी तक विवाह बचा रहता है नहीं तो बोझ बन जाता है.' मन के अंतर्द्वंद्व में घिरा मैं सोच रहा हूं कि सच बोल रहा हूं क्या?

'अपनी पत्नी के साथ वेलेंटाइन डे मनाइए इस बार ...उसे अच्छा लगेगा...आखिरकार असली वेलेंटाइन तो वही होती हैं,' उसके चेहरे पर तिर्यक मुस्कान तैर गई.

मुझे लगा कि मानों किसी ने मुझे रंगे हाथों पकड़ लिया हो.

मैं जानता हूं कि जब से मेरी प्रेमिका मेरी पत्नी बनी है तब से इसतरह की बातें मुझे कितनी गैर जरूरी लगती हैं. पहले जिसकी हर ख्वाहिश पूरी करने के लिए धरती आसमान एक कर देता था और अब उसकी बातों से मुझे ऊब और कुढ़न होने लगी है.

'आप सच में वेलेंटाइन डे मनाने जा रहीं हैं?' मैंने अविश्वास जाहिर करते हुए पूछा - 'हम्मम....मैं अपना पहला और शायद आखिरी वेलेंटाइन डे मनाने जा रही हूं?' कहते कहते वो रुक गई. उनकी बातों में नमी उतर आई भीगी आवाज को संयत करके बोली, 'दरअसल क्या है न मेरे पति कैंसर की चौथी स्टेज से गुजर रहें हैं... कीमो थैरेपी चल रही है... तो मेरे मन में आया कि मैं उन्हें सरप्राइज दूं.'

'आई एम सो सॉरी... मुझे नहीं पता था कि आप किस मुश्किल दौर से गुजर रहीं हैं?'

'मुश्किलों ने तो मेरे घर पर वर्षों से डेरा डाल रखा है हर बार चली आतीं हैं मुंह उठाए. इतनी आदत हो गई है कि अब मैं टेंशन नहीं लेती.' अपने आप में खोई हुई अचानक किसी नवयौवना सी चहककर बोली, 'मुझे बहुत पसंद है ...प्रेम का ये त्यौहार... वेलेंटाइन डे...पर अफसोस कभी मना नहीं पाई. 'क्यों? आपके पति को पसंद नहीं है क्या?'

'ना ना ऐसी बात नहीं है...वो इसलिए क्योंकि मेरे पति किसी और स्त्री के साथ रहते हैं,' कड़वाहट शब्दों में उतर आई थी. मुझे और भी तगड़ा झटका लगा. 'और आप उनके साथ वेलेंटाइन डे मनाने जा रहीं हैं?'

'जरूरत के समय उनकी नकली वेलेंटाइन छोड़ गई उन्हें... वो ठहाके लगाकर हंसते-हंसते रो पड़ीं,'

'अब वो बिल्कुल अकेले हो गए हैं तो...'

'तो क्या ?'

'दरअसल मैं अपनी दिव्यांग बेटी के साथ इतनी व्यस्त हो गई थी कि पहले मेरी नौकरी हाथ से निकली और फिर पति... और आप उसी धोखेबाज के साथ वेलेंटाइन डे मनाने जा रहीं हैं?' मैंने अपना गुस्सा जाहिर किया.

'उन्होंने अपना वेलेंटाइन बदल लिया पर मेरे वेलेंटाइन तो वही हैं आज भी...' 'जिसने आप को किसी और के लिए छोड़ दिया और आप अभी भी उनका पक्ष ले रही हैं?'

'उन्होंने मुझे छोड़ा... मैंने उन्हें नहीं...'

'ये किस तरह का लॉजिक है?'

'प्रेम में लॉजिक कहां होते हैं?' कोई शर्त नहीं... कोई तर्क नहीं...प्रेम ऐसा ही तो होता है... कोई शर्त होती नहीं प्यार में... 'मेरा बेटा भी गुस्सा हो रहा था कि मैं क्यों जा रही हूं? पर मैं खुद को रोक ही नहीं पाई... बहुत नाराज़ रही उनसे पर जब से पता चला है मेरी सारी शिकायतें ही खत्म हो गईं हैं. सूखे दरख़्त पर फिर से प्रेम की नन्हीं-नन्हीं कोंपल फूट पड़ी हैं.' वो अपनी रौ में बोलती जा रही हैं, 'ये मोह के धागे हैं इतनी आसानी से थोड़े ही टूटते हैं.' किंचित सोचते हुए फिर से बोलीं,

'प्रेम आपको उदात्त बना देता है, क्षमाशील भी... मैं उन्हें आत्मग्लानि के साथ मरते हुए नहीं देख सकती... अपनी क्षमा के साथ मैं उन्हें विदा करना चाहती हूं...हमेशा के लिए ...'

आंसुओं से भीगे अपने चेहरे को अपने पल्लू से पोंछते हुए रुदन भरे स्वर में कहा, 'अपने प्रेम के साथ...'

क्लास by बड़े भाई

असफलता का कारण मात्र कम प्रयास नहीं होता

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

प्रयास में कोई कसर नही छोड़ी गयी फिर भी आपके हाथ में लगी तो असफलता.. और आपकी इस असफलता के बाद शुरू हुआ आपके आसपास का ताना.. चुभती आँखें.. आपके ऊपर हंसी..अपने घर वालों का भी ऐसा ही ढंग ..आपको सुनने पड़ते हैं आपके साथ वालों की सफलता का बखान और आप घोषित किये जाते हैं बहानेबाज, लापरवाह, गैरजिम्मेदार.. और आपके पास सफाई देने के लिए कुछ नही होता...ऐसा आपके साथ भी हुआ है तो आप अकेले नही हैं यह सबको ही झेलना पड़ता है.. आज की बात उन्हीं लोगों और शुभचिंतकों पर है जो तानों से, हंसकर बेइज्जत करके हमारे लिए अपनी फिक्र दिखाते हैं..जो असफलता को बस आपकी लापरवाही आपकी कम मेहनत को ही कारण मानते हैं... ऐसा करने वालों से अभी के एक ज्वलंत मुद्दे से सीखना चाहिए..

अभी हमारे पड़ोस देश में युद्ध छिड़ा हुआ है..अनिश्चितता बनी हुई है और हम सभी तेल और गैस के संकट से स्वयं को बचाने में जुटे हैं... सवाल मेरा यह है कि सरकार,जहाज, रास्ता, तेल गैस सब है जैसा पहले था तो तेल और गैस का संकट क्यों मंडरा रहा...बताइए ?

आप कहेंगे कि तेल और गैस जिधर और जिस रास्ते से आता है उधर युद्ध चल रहा है, इसलिए..

मतलब आप यह मान रहे हैं न कि इस संकट के लिए अचानक पैदा हुई परिस्थिति जिम्मेदार है...?

तो ऐसे ही हम क्यों यह नही मान पाते कि हमारे प्रयास कई बार कमजोर नहीं होते लेकिन कुछ ऐसी परिस्थितियां आ जाती हैं जिससे हम सफल नहीं हो पाते. हमेशा प्रयास न होना ही असफलता का कारण नहीं होता, कुछ अन्य कारण भी परिणाम को प्रभावित कर सकते हैं.

कई बार हवा, पानी ,मिट्टी, प्रकाश भी कारण होते हैं बीज के पौधा न बन पाने का. भले बीज कितना भी स्वस्थ हो.

प्रतियोगिता का युग है.. हर बार कितने ही अथक प्रयास रह जाते हैं. आप ही बताइए जो आप बनना चाहते थे अगर वो नही बन पाए तो क्या आपके प्रयास में कमी थी.. आप कहेंगे नहीं और इसके लिए हजार कारण गिना देंगे कि क्यों नहीं हो पाया..

कहना यह है कि स्वयं को उनकी स्थिति पर रखकर, उन्हें समझिये उन पर अपना भरोसा दिखाइये, उनकी हिम्मत बढ़ाइए.. यही आपकी सही प्रतिक्रिया होगी.. ताने मारकर, उन पर हंसकर आप हम उनको मजबूत नहीं बल्कि भीतर तक तोड़ रहे होंगे. असफलता को उनकी दृष्टि में अभिशाप बना रहे हैं, उनकी और क्षमताओं को भी प्रभावित कर रहे होते हैं .देश काल परिस्थिति को भी ध्यान में रखिये..

और जब आप ऐसा करेंगे तब असफलताएं, सफलताओं में बदलते देखेंगे .यही एक समाज की की सार्थक पहल हो सकती है. चलिए मिलकर एक ऐसा ही समाज निर्मित करते हैं जिसमें असफलता कोसी न जाय बल्कि उसका सही कारण खोजा जाय और सीखकर उसे सफलता में बदला जाय.. एक ऐसा समाज बनें जिसमें प्रेरित करने की प्रवृत्ति हो.. हतोत्साहित करने की नही...वो मात्र सफलता को दुलारने वाला न हो बल्कि असफलता को भी संभालने वाला हो..

बस यही कहना था, धन्यवाद

लघुकथा

खुलती राहें

संदीप तोमर

रोशनलाल की पत्नी को मरे काफ़ी समय हो गया था. उसकी मौत के समय बेटा बमुश्किल पाँच साल का था. उसने दूसरी शादी न करने का फ़ैसला किया और बच्चे को पढ़ाने-लिखाने में कोई कसर नहीं छोड़ी. वक़्त को न मालूम क्या मंज़ूर था—बच्चे ने बारहवीं की परीक्षा पास की ही थी कि भारत मिल बंद होने की ख़बर जंगल की आग की तरह फैल गई. इस आग में न जाने कितने घर झुलसने की कगार पर आ गए थे. रोशनलाल उसी कपड़ा मिल में चौकीदार था.

मिल बंद हुई तो सभी वर्कर्स को मुआवज़े की रकम मिली. अधिकांश लोगों ने नई बस रही कॉलोनियों में सस्ती दरों पर प्लॉट खरीद लिए और उन्हीं प्लॉटों पर छोटे-मोटे रोज़गार भी शुरू कर दिए. रोशनलाल को बेटे के करियर की फ़िक्र सता रही थी. उसने मुआवज़े के पैसों से बेटे को विदेश पढ़ाई के लिए भेजने का विकल्प चुना और ख़ुद किराए के कमरे में रहकर छोटे-मोटे काम करके गुज़र-बसर करने लगा.

चार-पाँच साल पढ़ाई करने के बाद बेटे ने विदेश में ही नौकरी शुरू कर दी. बेटा अब उसके अकाउंट में कभी-कभी कुछ पैसे भेज देता और कहता— 'पिताजी, अब आपको छोटे-मोटे काम करने की ज़रूरत नहीं है. मैं आपको पैसे भेजता रहूँगा. जैसे ही मकान लूँगा, आपको भी यहीं बुला लूँगा.'

बेटे की बात सुनकर रोशनलाल का सीना फूल जाता. धीरे-धीरे बेटे ने पैसे भेजना बंद कर दिया. रोशनलाल को चिंता हुई, लेकिन उसने अपने अकाउंट में जमा बचत से गुज़ारा करना जारी रखा. बेटे से कोई शिकायत नहीं की.

एक दिन उसे एक अंतरराष्ट्रीय चिट्ठी मिली. खोलकर पढ़ा तो लिखा था— 'पिताजी, मैंने शादी कर ली है. खर्चे बढ़ गए हैं, इसलिए आपके अकाउंट में पैसा भेज पाने में असमर्थ हूँ. आशा है, आप मेरी विवशता समझेंगे.'

रोशनलाल की आँखें मायूसी से नम हो गईं. वह गहरी चिंता में डूबा था कि तभी किसी ने उसके कमरे के बाहर से आवाज़ लगाई. वह बाहर आया तो देखा—पड़ोस में बन रही मल्टी-स्टोरी बिल्डिंग का बिल्डर था. उसने कहा— 'रोशनलाल, हमारी बिल्डिंग बनकर तैयार हो गई है. कुछ फ़्लैटों में परिवार रहने भी लगे हैं, कुछ में जल्दी ही आ जाएँगे. मुझे वहाँ एक गार्ड की ज़रूरत है. गार्ड रूम इस तरह बनाया गया है कि सोने, खाने और स्नान आदि की कोई परेशानी नहीं होगी. मैं तुम्हारे जैसे ईमानदार व्यक्ति को ही यह ज़िम्मेदारी देना चाहता हूँ. अगर तुम हाँ कहो तो...'

रोशनलाल की आँखों में एक चमक उभरी. वह मन-ही-मन बुदबुदाया— 'ईश्वर जब एक रास्ता बंद करता है, तो दूसरा रास्ता भी खोल देता है.' उसने उत्तर में बस हाथ जोड़ दिए. उसकी आँखें ठेकेदार के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर रही थीं.

व्यंग्य रचना

फटे पोस्टर का मातम

सुरेश सौरभ

एक नेता जी दुखी मन से सोशल मीडिया के कटघरे में खड़े होकर रुवाँसे स्वर में कह रहे हैं- 'यह विपक्षी मुझे फूटी आँख पसंद नहीं करते, जब देखो तब कोई न कोई ऐसी-वैसी खुराफात की कवायद करते रहते हैं, जिससे हमारी पाक-साफ छवि पर बट्टा लगे , पर उनके शैतानी मंसूबे कभी कामयाब नहीं होते. आखिर मेरे पोस्टरों-बैनरों और कटऑउटों ने उनका क्या बिगाड़ा था, जो नुचवा-नुचता कर फड़वा-फड़वा कर फिंकवा दिए.

अपने हाथों से अपना फटा-नुचा पोस्टर दिखाते हुए, 'ऐसा भी कोई भला किसी के साथ करता है क्या? -जैसे इन लोगों ने मेरे साथ किया. पिछली बार होली की शुभकामनाओं वाले पोस्टर बड़े मन से लगवाये थे, तो उस पर भी इन लोगों ने होली खेली थी. कालिख पोती थी. गोबर पोता था, आखिर ये किस लोक के लोग हैं-आखिर इनके अंदर की सारी इंसानियत क्यों मर गयी है- आखिर इन जलनखोर विपक्षियों का हमने कौन सा गन्ना गोड़ लिया है- कौन से खेत जोत-बो कर हड़प लिए हैं-सच्चाई तो यही है कि इन लोगों को दिन प्रतिदिन हो रही हमारी तरक्की फूटी आँखों से नहीं सुहाती. इसलिए इनके कलेजों पर मोटे-मोटे- सांप लोट रहे हैं-अजगर लोट रहे हैं.

मेरा बढ़ता जनाधार, बढ़ती प्रसिद्धि देखकर यह सब बुरी तरह जल-भुन रहे हैं-इसीलिए हताशा में, निराशा में, यह बिलकुल टपोरियों वाली हरकतों पर अमादा हो चुके हैं. मेरे विश्वस्त सूत्र बताते हैं कि गांव मोहल्ले के कुछ उठाईगीर टाइप के लौडो ,लपाड़ो को दस-दस, बीस-बीस रुपये देकर मेरे पोस्टर फड़वाए गए. मेरे कटआउट हटवाये गए-यह घोर निंदनीय जघन्य अपराध है, किसी की बनी बनाई छवि को बिगाड़ाने का, पर मेरे प्यारे भाइयों और बहनों आप लोग जरा भी इसकी चिन्ता न करें, हम इससे जरा भी विचलित होने वाले नहीं हैं-हम हमेशा जनता की सेवा करते रहेंगे, जनता के लिए हमेशा संघर्ष करते रहेंगे और ऐसे ही हम अपनी शुभकामनाओं-आशीर्वादों के पोस्टर लगवाते रहेंगे ,देखते हैं कितने फाड़ोगे मेरे पोस्टर-बैनर. उनके भावुक वीडियो पर उनके चमचे और भक्त अपनी भावुक कमेंट जी भर कर उगलते रहे. उलीचते रहे. अगले दिन एक होनहार सोशल मीडिया के कमेंटबाज ने उनकी वीडियो के नीचे टिप्पणी लिखी 'नेता जी आज का अखबार देख लीजिए,अपने शहर की, सफाई अभियान की जद में ,आप भी आ गये हैं, शुक्र करिए कि नगर निगम ने आप के सिर्फ पोस्टर बैनर फड़वाकर ही हटवा दिये, वर्ना और लोगों के बैनर पोस्टरों पर मोटा जुर्माना तक लगाया है. आप का सत्ता से पत्ता जुड़ा है,इसलिए खुदा से अपनी खैर मनाइए, यह खुदा का ही रहमोकरम है कि जिम्मेदारों ने आप को थोड़ी सी इज्जत बख्श दी.

लघु कथाएं

कार्टून

सुबह-सुबह नेता जी चाय की चुस्कियाँ लेते हुए समाचार पत्र पढ़ रहे थे. तभी अचानक उस पर अपना कार्टून छपा देख वे आग बबूला हो उठे और चाय का कप लॉन पर सोए हुए शेरू (डॉग) पर फेंक दिया. गर्म चाय की जलन से वह तड़प उठा. शेरू नेता जी की तरफ बहुत अजीब नजरों से देख रहा था. नेताजी की टेढ़ी-मेढ़ी परछाई फर्श से दीवार तक चली गई थी; जिसमें वे बिल्कुल असली कार्टून लग रहे थे. उन्हें देखकर शेरू अपना दर्द भूल गया और मन ही मन खुश होने

बसंत राघव

दूरी

एक वयोवृद्ध साहित्यकार बरसों से गुमनामी की जिंदगी जी रहे थे. अचानक उनके एक रचनाकार दोस्त को उनकी याद आई. जो दूसरे शहर में रहते थे, उन्होंने अपने एक परिचित को यह जानने के लिए फोन किया कि वे (वयोवृद्ध साहित्यकार) कैसे हैं? परिचित व्यक्ति ने अनभिज्ञता प्रकट की. चूँकि पिछले कई वर्षों से उनकी कोई रचना प्रकाशित नहीं हो रही थी, इसलिए जानने वाले लोग भी उन्हें व्यक्तिगत रूप से भूल चुके थे. बहुत मशक्कत के बाद, परिचित व्यक्ति को उस वयोवृद्ध साहित्यकार के इकलौते बेटे का फोन नंबर मिल गया. उन्होंने उनके बेटे को फोन किया. उधर से जवाब आया, 'वे हमारे साथ नहीं रहते हैं.' परिचित व्यक्ति ने उनसे नंबर मांगा ही था, लेकिन तब तक फोन कट चुका था.

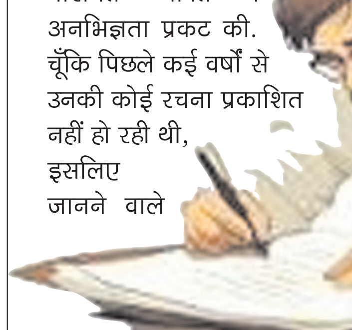

कविता

हीरों से भी ज्यादा कीमती चमक

शहरयार

पीली साड़ी और गुलाबी किनारा
लगता है, खिल उठा हो बाग़ सारा
उस पर यह चाँदी का कमरबंद
बिल्कुल तुम्हारी कमर पर जँच रहा है

धातु चाहे कोई भी हो इसकी
पर तुम्हारी कमर पर यह हीरे जैसा चमक रहा है
जब तुम चलती हो धीमे क़दमों से
तो इसकी रोशनी चारों तरफ़ फ़ैल जाती है

पीला रंग जैसे सुनहरी धूप हो
और गुलाबी जैसे खिले हुए गुलाब
उनके बीच यह कमरबंद की चमक
तुम्हारे रूप को और भी सुंदर बना रही है

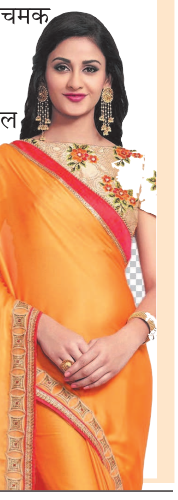

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी